Research Paper History

प्राचीन भारतीय इतिहास में हिन्दू विवाह संस्कार

पूर्णिमा कुमारी डा॰ जाकिर हुसैन टिचर ट्रेनिग कॉलेज एवं इतिहास विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

कुमुद कुमारी डा॰ जाकिर हुसैन टिचर ट्रेनिग कॉलेज एवं इतिहास विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

KEYWORDS

प्राचीन काल से ही हिन्दू धर्म में, सद्गृहस्थ की, परिवार निर्माण की जिम्मेदारी उठ. ाने के योग्य शरीरिक, मानसिक परिपक्वता आ जाने पर युवक–युवतियों का विवह संस्कार कराया जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार विवाह कोई शरीरिक या सामा. जिक अनुबंध मात्र नहीं हैं, यहाँ दामपत्य को एक श्रे ठ आध्यात्मिक साधना का भी रूप दिया गया है। इसिलिए कहा गया है 'धन्यो गृहस्थाश्रमः'। सद्गृहस्थ ही समाज को अनुकूल व्यवस्था एवं विकास में सहायक होने के साथ श्रे ठ नई पीढ़ी बनाने का भी कार्य करते है। वही अपने संसाधनों से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ एवं संयास आश्रमों के साधकों को वांछित सहयोग देते रहते हैं। ऐसे सद्गृहस्थ बनाने के लिए विवाह को रूढ़ियो–कुरितियों से मुक्त कराकर श्रे ठ संस्कार के रूप में पुनः प्रति ठत करना आवश्यक है। युग निमार्ण के अन्तर्गत विवाह संस्कार के पारिवारिक एवं सामु. हक प्रयोग सफल और उपयोगी सिद्ध हुए है।

विवाह दो आत्माओं का बंधन है। दो प्राणी अपने अलग–अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक सम्मलित इकाई का निर्माण करते हैं। स्त्री और पुरू ा दोनों में परमात्मा ने कुछ विशे ताएं और कुछ अपूणताएँ दे रखी हैं। विवाह सम्मिलन से एक–दूसरे की अपूर्णताओं से पूर्ण करते हैं, इससे समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इसिलिए विवाह को सामान्यतया मानव जीवन की एक आवश्यकता माना गया है। एक–दूसरे को अपनी योग्ताओं और भावनाओं का लाभ पहुँचाते हुए गाड़ी में लगे हुए दो प. हियों की तरह प्रगति–पथ पर अग्रसर होते जाना विवाह का उद्देश्य है। वासना का दाम्पत्य–जीवन में अत्यंत तुच्छ ओर गौण स्थान है, प्रधानतः दो आत्माओं के मिलने से उत्पन्न होने वाली उस महती शक्ति का निमार्ण करना है, जो दोनों के लौकिक एवं आध्यात्मिक जीवन के विकास में सहायक सिद्ध हो सके।

विधि

मैंने उद्देश्यपूर्ण निर्दैन पद्धति से प्राचीन भारतीय इतिहास में हिन्दू विवाह संस्कार का अध्ययन किया है। विवाह संस्कार में देव पूजन, यज्ञ आदि से संबंधित सभी व्यवस्थाएँ पहले से बनाकर रखा जाता था। वर सत्कार के लिए सामग्री के साथ एक थाली रखते थे, ताकि हाथ, पैर धोने की क्रिया में जल फैले नहीं। मधुपर्क पान के बाद हाथ धुलाकर उसे हटा दिया जाता था। यज्ञोपवित के लिए पीला रंगा हुआ यज्ञा. ेपवित एक जोड़ा रखा जाता था। वस्त्रोपहार तथा पु पोपहार के वस्त्र एवं मालाएं तैयार रहता था। कन्यादान में हाथ पीले करने की हल्दी, गुप्तदान के लिए गुंथा हुआा आटा रखते थें। ग्रन्थिबंधन के लिए हल्दी, पु प, अक्षत, दुर्वा और द्रव्य रखते थे। शिलारोहण के लिए पत्थर का शिला या समतल पत्थर का एक टुकड़ा रखा जाता था। हवन सामग्री के अतिरिक्त लाजा (धान की खीलें) रखा जाता था। वर–वध ु के पद प्रक्षालन के लिए परात या थाली रखे जाते थे।

विवेचन

वर–वरण (तिलक)

विवाह से पूर्व 'तिलक' का संक्षिप्त विधान इस प्रकार था– वर पूर्वाभिमुख तथा तिलक करने वाले (पिता या भाई आदि) पश्चिमाभिमुख बैठकर निम्नकृत्य करते थे–मंगला. चरण, भाटकर्म, तिलक, कलावा, कलशपूजन, गुरूवंदना, गौड़ी–गणेश पूजन, सर्वदेव नमस्कार, स्वस्तिवाचन आदि इसके बाद कन्यादाता वर का यथोचित स्वागत सत्कार करते थे। तदुपरांत 'वर' को प्रदान की जाने वाली समस्त सामग्री कन्यादाता हाथ में लेकर संकल्प मंत्र बोलते हुए वर को प्रदान करते थे। तत्पश्चात् क्षमा प्रार्थना नमस्क. ार, विसर्जन तथा शान्ति पाठ करते हुए कार्यक्रम समाप्त करते थे।

हरिद्रालेपन

विवाह से पूर्व वर–कन्या के प्रायः हल्दी चढ़ाने का प्रचलन था, उसका संक्षिप्त विधान इस प्रकार था–सर्वप्रथम भाटकर्म, तिलक, कलावा, कलशपूजन, गुरूवंदना, गौड़ी–गण ेश पूजन, सर्वदेव नमस्कार, स्वस्तिवाचन आदि किया जाता था। तत्पश्चात् मंत्र बोलते हुए वर/कन्या की हथेली, अंगअवयवों में हरिद्रालेपन करते थे। इसके बाद वर के दाहिने हाथ में तथा कन्या के बायें हाथ में रक्षा सूत्र–कंकण (पीले वस्त्र में कौड़ी, लोहे की अंगूठी, पीली सरसों, पीला अक्षत बांधा जाता था) पहनाते थे। तत्पश्चात् क्षमा प्रार्थना नमस्कार, विसर्जन तथा शान्ति पाठ करते हुए कार्यक्रम समाप्त करते थे।

द्वार–पूजन

विवाह हेतु बारात जब द्वार पर आती थी, तो सर्वप्रथम 'वर' का स्वागत–सत्कार किया जाता था, जिसका क्रम इस प्रकार था––'वर' के द्वार पर आते ही आरती की प्रथा होती थी, कन्या की माता आरती करती थी। तत्पश्चात् 'वर' और कन्यादाता परस्पर अभिमुख बैठकर भाटकर्म, तिलक, कलावा, कलशपूजन, गुरूवंदना, गौड़ी–गणेश पूजन, सर्वदेव नमस्कार, स्वस्तिवाचन आदि करते थे। इसके बाद कन्यादाता वर सत्कार के सभी कृत्य आसन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, मधुपर्क आदि सम्पन्न करते थे। तत्पश्चात् तिलक तथा अक्षत लगाते थे। माल्यार्पण एवं कुछ द्रव्य 'वर' को प्रदान करते थे। तत्पश्चात् क्षमाप्रार्थना, नमस्कार, देवविसर्जन एवं शान्तिपाठ करते थे।

विवाह संस्कार का विशेष कर्मकांड

विवाह वेदी पर वर और कन्या दोनों का बुलाया जाता था, प्रवेश के साथ उन पर पु पाक्षत डाले जाते थे। कन्या दायीं ओर तथा वर बायीं ओर बैठते थे। कन्यादान करने वाले प्रतिनिधि कन्या के पिता, भाई जो भी हो, उन्हें पत्नी सहित कन्या की ओर बिठाया जाता था। पत्नी दाहिने और पति बायीं ओर बैठते थे। सभी के सामने आचमनी, पंचपात्र आदि उपकरण होते थे। पवित्रीकरण, आचमन, शिखावंदन, प्राण ाायाम, न्यास, पृथ्वीपूजन आदि भाट्कर्म संपन्न करा लिये जाते थे। अतिथि रूप में हुए वर का सत्कार किया जाता था। तत्पश्चात् आसन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, नैवेद्य आदि निर्धारित मंत्रों से समर्पित किया जाता था।

विवाह घोषणा

विवाह घो ाणा में वर–कन्या के गोत्र पिता–पितामाह आदि का उल्लेख रहता था तथा घो ाणा रहता था कि यह दोनों अब विवाह संबंध में आबद्ध हुए। इनका साह. चर्य धर्म–संगत जन साधारण की जानकारी में घोि ात किया हुआ माना जाता था।

मंगलाष्ट्क

विवाह घो ाणा के बाद, सस्वर मंगला टक मंत्र बोले जाते थे। इन मंत्रों में सभी श्रे ठ शक्तियों से मंगलमय वातावरण, मंगलमय भवि य के निमार्ण की प्रार्थना की जाती थी। पाठ के समय सभी लोग भावनापूर्वक वर–वधू के लिए मंगल कामना करते थे। एक स्वयंसेवक उनके ऊपर पु पों की व र्ा करते रहते थे।

परस्पर उपहार

वर पक्ष की ओर से कन्या को और कन्या पक्ष की ओर से वर को वस्त्र–आभू ाण भेंट किये जाने की परम्परा थी। यह कार्य श्रद्धानुरुप पहले ही हो जाता था। वर–वध ू उन्हें पहनकर ही संस्कार में बैठते थे। यहाँ प्रतीक रूप से पीले दुपट्टे एक–दूसरे को भेंट किये जाते थे। यही ग्रन्थिबंधन के भी काम आ जाते थे।

माल्यापर्ण

पु पोहार में वर–वधू एक–दूसरे को अपने अनुरूप स्वीकार करते हुए, पु प मालाएं अर्पित करते थे। हृदय से वरण करते थे। भावना करते थे कि देव–शक्तियों और सत्पुरू ाों के आशीर्वाद से वे परस्पर एक–दूसरे के गले के हार बनकर रहेंगे। मंत्रा. ेच्चारण के साथ पहले कन्या वर को फिर वर–कन्या को माला पहनाते थे।

हस्तपीतकरण

कन्या दोनों हथेलियों को सामने कर देती थी। कन्यादाता गीली हल्दी मंत्र के साथ उस पर मलते है। भावना करते थे कि देव सान्निध्य में इन हाथों को स्वार्थपरता के कुसंस्कारों से मुक्त कराते हुए त्याग परमार्थ के संस्कार जागृत किये जा रहे हैं।

कन्यादान–गुप्तदान

कन्या के हाथ हल्दी से पीले करके माता–पिता अपने हाथ में कन्या के हाथ, गुप्तद. ान का धन और पु प रखकर संकल्प बोलते थे और उन हाथों को वर के हाथों में सौंप देते थे। वह इन हाथों को गंभीरता और जिम्मेवारी के साथ अपने हाथों को पकड़कर स्वीकार–शिरोधार्य करता था। भावना करते थे कि कन्या वर को सौंपते हुए उसके अभिभावक अपने समग्र अधिकार को सौंपते थे। कन्या के कुल गोत्र अब पितृ

परम्परा से नहीं, पति परम्परा के अनुसार होंगे। कन्या को यह भावनात्मक पुरु ाार्थ करने तथा पति को उसे स्वीकार करने या निभाने की शक्ति देवशक्तियाँ प्रदान करते थे। इस भावना के साथ कन्यादान का संकल्प बोला जाता था। संकल्प पूरा होने पर संकल्पकत्तार् कन्या के हाथ वर के हाथ में सौंप देते थे।

गोदान

गौ पवित्रता और परमार्थ परायणता की प्रतीक था। कन्या पक्ष वर को ऐसा दान देते थे, जो उन्हें पवित्रता और परमार्थ की प्रेरणा देने वाला हो। सम्भव हो तो कन्यादान के अवसर पर गाय दान में दी जाती थी। कन्यादान करने वाले हाथ में सामग्री लेते थे। भावना करते थे कि वर–कन्या के भावी जीवन को सुखी समुन्नत बनाने के लिए श्रद्धापूर्वक श्रे ठ करते हैं। सामग्री वर के हाथ में सौंप देते थे।

मर्यादाकरण

कन्यादान करने वाले अपने हाथ में जल, पु प, अक्षत लेते थे। भावना करते थे कि वर को मर्यादा सौंप रहे हैं। वर मर्यादा स्वीकार करें, उसके पालन के लिए देव शि क्तियों के सहयोग की कामना करते थे।

पाणिग्रहण

कन्या अपना हाथ वर की ओर बढ़ाते थे, वर उसे अंगूठा सहित; समग्र रूप से पकड़ लेते थे। भावना करते थे कि दिव्य वातावरण में परस्पर मित्रता का भाव सहित एक–दूसरे के उत्तरदायित्व स्वीकार कर रहे हैं।

ग्रन्थिबंधन

ग्रन्थिबंधन, आचार्य या प्रतिनिधि या कोई मान्य व्यक्ति करते थे। दुपट्टे के छोर एक साथ करके उसमें मंगल–द्रव्य रखकर गाँठ बाँध दी जाती थी। भावना की जाती थी कि मंगल–द्रव्यों के मंगल संस्कार सहित देवशक्तियों के समर्थन तथा स्नेहियों की सद्भावना के संयुक्त प्रभाव से दोनों इस प्रकार जुड़े रहे कि जो सदा जुड़े रहकर एक–दूसरे की जीवन लक्ष्य यात्रा में पूरक बनकर चलें।

वर–वधू की प्रतिज्ञाएँ

वर–वधू स्वयं प्रतिज्ञाएँ पढ़ते थे, यदि संभव न हो, तो आचार्य एक–एक करके प्र. तिज्ञाएँ व्याख्या सहित समझाते थे।

वर की प्रतिज्ञाएँ

1. आज से धर्मपत्नी को अर्द्धांगिनी घो ित करते हुए, उसके साथ अपने व्यक्तित्व को मिलाकर एक नये जीवन की सृ ि करता हूँ। अपने शरीर के अंगों की तरह धर्मपत्नी का ध्यान रखूँगा।
2. प्रसन्नतापूर्वक गृहलक्ष्मी का महान अधिकार सौंपता हूँ और जीवन के निर्धारण में उनकें परामर्श महत्व दूँगा।
3. रूप, स्वास्थ्य, स्वभावगत गुण–दो ा एवं अज्ञानजनित विकारों को चित्त में रखूँगा, उनके कारण असंतो ा व्यक्त नहीं करूँगा। स्नेहपूर्वक सुधरने या सहन करते हुए आत्मीयता बनाये रखूँगा।
4. पत्नी का मित्र बनकर रहूँगा, और पूरा–पूरा स्नेह देता रहूँगा। इस वचन का पालन पूरी नि ठा और सत्य के आधार पर करूँगा।
5. पत्नी के लिए जिस प्रकार पतिव्रत की मर्यादा कही गयी है, उसी दृढ़ता से स्वयं पत्नीव्रत धर्म का पालन करूँगा। चिंतन और आचरण दोनों से ही पर नारी से वासनात्मक संबंध नहीं जोरूँगा।
6. गृह व्यवस्था में धर्मपत्नी को प्रधनता दूँगा। आमदनी और खर्च का क्रम उसकी सहमति से करने की गृहस्थोचित जीवनचर्या अपनाऊँगा।
7. धर्मपत्नी की सुख–शांति तथा प्रगति–सुरक्षा की व्यवस्था करने में अपनी शक्ति और साधन आदि को पूरी ईमानदारी से लगाता रहूँगा।
8. अपनी ओर से मधुर भा ाण और श्रे ठ व्यवहार बनाये रखने का पूरा–पूरा प्रयत्न करूँगा। मतभेदों और भूलों का सुधार शांति के साथ करूँगा। किसी के सामने अपनी पत्नी को लांछित–तिरस्कृत नहीं करूँगा।
9. पत्नी के असमर्थ या अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाने पर भी अपने सहयोग और कर्त्तव्य पालन से रत्ती भर भी कमी नहीं करूँगा।

कन्या की प्रतिज्ञाएँ

1. अपने जीवन को पति के साथ संयुक्त करके नये जीवन की सृ ि करूँगी। इस प्रकार घर में हमेशा सच्चे अर्थों में अर्द्धांगिनी बनकर रहूँगी।
2. पति के परिवार के परिजनों को एक ही शरीर के अंग मानकर सभी के साथ शि टता बरतूँगी, उदारतापूर्वक सेवा करूँगी, मधुर व्यवहार करूँगी।
3. आलस्य को छोड़कर परिश्रमपूर्वक गृह कार्य करूँगी। इस प्रकार पति की प्रगति और जीवन विकास में समुचित योगदान करूँगी।
4. पतिव्रत धर्म का पालन करूँगी, पति के प्रति श्रद्धा–भाव बनाये रखकर सदैव उनके अनुकूल रहूँगी। कपट–दुराव न करूँगी, निदेर्शों के अविलम्ब पालन का अभ्यास करूँगी।
5. सेवा, स्वच्छता तथा प्रियभा ाण का अभ्यास बनाये रखूँगी। ई र्या, कुढ़न आदि दो ाों से बचूँगी और सदा प्रसन्नता देने वाली बनकर रहूँगी।
6. मितव्ययी बनकर फिजुलखर्ची से बचूँगी। पति के असमर्थ हो जाने पर भी गृहस्थ के अनुशासन का पालन करूँगी।
7. नारी के लिए पति, देव स्वरूप होता है– यह मानकर मतभेद भुलाकर, सेवा करते हुए जीवन भर सक्रिय रहूँगी, कभी भी पति का अपमान नहीं करूँगी।
8. जो पति के पूज्य और श्रद्धा पात्र हैं, उन्हें सेवा द्वारा और विनय द्वारा सदैव संतु ट रहूँगी।
9. परिवार के सदस्यों में सुसंस्कारों के विकास तथा उन्हें सद्भावना के सूत्रों में बाँधे रहने का कौशल अपने अन्दर विकसित करूँगी।

प्रायश्चित होम

गायत्री मंत्र के आहुति के पश्चात् पाँच आहुतियाँ प्रायश्चित होम की अतिरिक्त रूप से दी जाती थी। वर–वधू हवन सामग्री से आहुति करते थे। भावना करते थे कि प्र. ायश्चित आहुति के साथ पूर्व दु कृत्यों की धुलाई हो रही है। स्वाहा के साथ आहुति डालते थे, 'इदं न मम' के साथ हाथ जोड़कर नमस्कार करते थे।

शिलारोहण

शिलारोहण के द्वारा पत्थर पर पैर रखते हुए प्रतिज्ञा करते थे कि जिस प्रकार अंगद ने अपना पैर जमा दिया था, उसी तरह हम पत्थर की लकीर की तरह अपना पैर उत्तरदायित्वों को निबाहने के लिए जमाते है। मंत्र बोलने के साथ वर–वधू अपने दा. हिने पैर को शिला पर रखते थे। भावना करते थे कि उत्तरदायित्वों के निवार्ह करने तथा बाधाओं को पार करने की शक्ति हमारे संकल्प और देव अनुग्रह से मिल रही है।

लाजाहोम एवं परिक्रमा (भाँवर)

लाजा होम और परिक्रमा का मिल–जुला क्रम चलता था। शिलारोहण के बाद वर–वधू खड़े–खड़े गायत्री मंत्र से एक आहुति समर्पित करते थे। अब मंत्र के साथ परिक्रमा करते थे। वधू आगे, वर पीछे चलते थे। एक परिक्रमा पूरी होने पर लाजा होम की एक आहुति करते थे। आहुति करके दूसरी परिक्रमा पहले की तरह मंत्र बोलते हुए करते थे। इसी प्रकार लाजा होम की दूसरी आहुति करके तीसरी परिक्रमा तथा तीस. री आहुति करके चौथी परिक्रमा करते थे। इसके बाद गायत्री मंत्र की आहुति देते हुए तीन परिक्रमा वर को आगे करके परिक्रमा मंत्र बोलते हुए कराई जाती थी। आहुति के साथ भावना करते थे कि बाहर यज्ञीय उर्जा तथा अंतःकरण में यज्ञीय भावना तीव्रतर हो रही है। परिक्रमा के साथ भावना करते थे कि यज्ञीय अनुशासन को केन्द्र मानकर, यज्ञाग्नि को साक्षी करके आदर्श दाम्पत्य के निवार्ह का संकल्प कर रहे हैं।

सप्तपदी

वर–वधू खड़े होते थे। प्रत्येक कदम बढ़ाने से पहले देव शक्तियों की साक्षी का मंत्र बोला जाता था, उस समय वर–वधू हाथ जोड़कर ध्यान करते थे। उसके बाद चरण बढ़ाने का बोलने पर पहले दायाँ कदम बढ़ाते थे। इसी प्रकार एक–एक करके सात कदम बढ़ाये जाते थे। भावना की जाती थी कि योजनाबद्ध–प्रगतिशील जीवन के लिए देव साक्षी में संकल्पित हो रहे हैं, संकल्प और देव अनुग्रह का संयुक्त लाभ जीवन भर मिलता रहेगा

1. अन्न वृद्धि के लिए पहली साक्षी
2. बल वृद्धि के लिए दूसरी साक्षी
3. धन वृद्धि के लिए तीसरी साक्षी
4. सुख वृद्धि के लिए चौथी साक्षी
5. प्रजा पालन के लिए पाँचवी साक्षी
6. ऋतु व्यवहार के लिए छठवीं साक्षी
7. मित्रता वृद्धि के लिए सातवीं साक्षी

आसन परिवर्तन

सप्तपदी के पश्चात् आसन परिवर्तन करते थे। तब तक वधू दाहिनी ओर थी अर्थात् बाहरी व्यक्ति जैसी स्थिति में थी। सप्तपदी होने तक की प्रतिज्ञाओं में आबद्ध हो जाने के उपरान्त वह घर वाली अपनी आत्मीय बन जाती थी, इसिलिए उसे बायीं ओर बैठाया जाता था। बायें से दायें लिखने का क्रम था। बायाँ प्रथम और दाहिना द्वितीय माना जाता था। सप्तपदी के बाद अब पत्नी की प्रमुखता प्राप्त हो जाती थी। लक्ष्मी–नारायण, उमा–महेश, सीता–राम, राधे–श्याम आदि नामों में पत्नी को प्रथम, पति को द्वितीय स्थान प्राप्त था। दाहिनी ओर से वधू का बायीं ओर आना, अधिकार हस्तांतरण था। बायीं ओर के बाद पत्नी गृहस्थ जीवन की प्रमुख सूत्रधार बनती थी।

पाद प्रक्षालन

आसन परिवर्तन के बाद गृहस्थाश्रम के साधक के रूप में वर–वधू का सम्मान पाद प्रक्षालन करके किया जाता था। कन्या पक्ष की ओर प्रतिनिधि स्वरूप कोई दम्पति या अकेले व्यक्ति पाद प्रक्षालन करते थे। पाद प्रक्षालन करने वालों का पवित्रीकरण–. सिंचन किया जाता था। हाथ में हल्दी, दुवार्, थाली में जल लेकर प्रक्षालन करते थे। प्रथम मंत्र के तीन बार वर–वधू के पैर पखारा जाता था, फिर दूसरे मंत्र के साथ यथा श्रद्धा भेंट दिया जाता था।

ध्रुव–सूर्य ध्यान

माना जाता था कि ध्रुव स्थिर तारा है एवं अन्य सब तारागण गतिशील रहते हैं। ध्रुव अपने निश्चित स्थान पर ही स्थिर रहता है। अन्य तारें उसकी परिक्रमा करते हैं। ध्रुव दर्शन का अर्थ था– दोनों अपने– अपने परम पवित्र कर्तव्यों पर उसी तरह दृढ़ रहेगें, जैसे कि ध्रुव तारा स्थिर था। कुछ कारण उत्पन्न होने पर भी इस आदर्श से विच. लित न होने की प्रतिज्ञा को निभाया जाता था और संकल्प को पूरा किया जाता था। ध्रुव स्थिर चित्त रहने की ओर, अपने कर्तव्यों पर दृढ़ रहने की प्रेरणा देता था। इसी प्रकार सूर्य की अपनी प्रखरता, तेजस्विता, महत्ता सदा स्थिर रहती थी। वह अपने निध ार्रित पथ पर ही चलता था, यहीं हमें करना चाहिए। यही भावना पति–पत्नी करते थे।

शपथ आश्वासन

पति–पत्नी एक दूसरे के सिर पर हाथ रखकर समाज के सामने शपथ लेते थे। एक आश्वासन देकर अंतिम प्रतिज्ञा करते थे कि वे निस्संदेह निश्चित रूप से एक–दूसरे

को आजीवन ईमानदार, नि ठावान और वफादार रहने का विश्वास दिलाते थे। पुरु ों का व्यवहार स्त्रियों के साथ छली–कपटी और विश्वासघातियों जैसा रहता था। रूप, यौवन के लोभ में कुछ दिन मीठी बाते करते थे, पीछे क्रूरता और दु टता पर उतर जाते थे। पग–पग पर उन्हें सताते और तिरस्कृत करते थे। प्रतिज्ञाओं को तोड़कर आर्थिक एवं चारित्रिक उच्छृंखलता बरतते थे और पत्नी की इच्छा की परवाह नहीं करते थे। समाज में ऐसी घटना कम घटित नहीं होती थी। ऐसी दशा में ये प्रतिज्ञाएँ औपचारिकता मात्र रह जाने की आशंका हो सकती थी। संतान न होने पर लड़कियाँ होने पर लोग दूसरा विवाह करने पर उतारू हो जाते थे। पति सिर पर हाथ रखकर कसम खाता था कि दूसरे दुरात्माओं के श्रेणी में उसे न गिना जाए। इस प्रकार पत्नी भी अपनी नि ठा के बारे में पति को इस शपथ–प्रतिज्ञा द्वारा विश्वास दिलाती थी।

मंगलतिलक

वधू वर को मंगल तिलक करती थी। भावना करती थी कि पति का सम्मान करते हुए गौरव को बढ़ाने वाली सिद्ध हो। इसके पश्चात् स्वि ट्कृत होम, पूर्णाहुति, वसोध्ार्रा, आरती, घृत–अवघ्राण, भस्म धारण, क्षमा प्रार्थना आदि कृत सम्मपन करती थी।

अभि ोक सिंचन वर–कन्या को बिठाकर कलश का जल लेकर उनका सिंचन किया जाता था। भावना कि जाती थी कि जो सुसंस्कार बोये गये हैं, उन्हें दिव्य. जल से सिंचित किया जा रहा है। सबके सद्भाव से उनका विकास होगा और सफलता–कुशलता के कल्याणप्रद सुफल उनमें लगेंगे। पु प्पव र्ा के रूप में सभी अपनी शुभकामनाएँ–आशीर्वाद प्रदान करते थे। इसके बाद विसर्जन और आशीर्वचन के पु प प्रदान कर कृत्य समाप्त किया जाता था।

निष्कर्ष

विवाह संस्कार सभी सोलह संस्कारों में सबसे महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता था। विवाह संस्कार को परिवार निर्माण की प्रथम सीढ़ी कही जाती थी, इसके पश्चात् ही समाज का निर्माण होता था। विवाह संस्कार के द्वारा वर–वधू को पूर्व के दु कृ. तियों से मुक्ति मिलती थी तथा नि पाप एवं मंगलमयी जीवन निर्वहन के पथ पर अग्रसर होते थे। इस संस्कार के प्रत्येक विधि एवं रस्म का विशे ा महत्व होता था। विवाह संस्कार का प्रथम रस्म वर–वरण (तिलक) होता था, तत्पश्चात् हरिद्रालेपन, द्व ार–पूजन, विवाह घो णा, मंगला ट्क, परस्पर उपहार, माल्यार्पण, हस्तपीतकरण, कन्यादान–गुप्तदान, गोदान, मर्यादाकरण, पाणिग्रहण, ग्रन्थिबंधन, वर–वधू की प्रतिज्ञाएँ, प्रायश्चित होम, शिलारोहण, लाजाहोम एवं परिक्रमा (भाँवर), सप्तपदी, आसन परिवर्तन, पाद प्रक्षालन, ध्रुव–सूर्य ध्यान, शपथ आश्वासन तथा मंगलतिलक के साथ समाप्ति होती थी। विवाह संस्कार के उपरोक्त वर्णित सभी रस्मों के समाप्ति के पश्चात् वर–वधू अपने दायित्व को समझ दाम्पत्य जीवन को सुखद तथा सफल बनाने की प्रतिज्ञा लेते थे।

आभार–प्रदर्शन

मैं, डा॰ मदनमोहन झा विभागाध्यक्ष तथा सभी प्राध्यापक **इतिहास विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा** के प्रति आभार प्रकट करती हूँ कि उक्त कार्य में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इन्होंने मेरा सहयोग किया है।

REFERENCES

1. रोमिला थापर, प्राचीन भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली 2008 द्य 2. हरिदत्त वेदालंकर, भारतीय संस्कृति का संक्षिप्त इतिहास, एम. एन. पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर 2007 द्य 3. शिवस्वरूप सहाय, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, मोतीलाल बना., दिल्ली, 2004 द्य 4. कैलाशचन्द्र जैन, प्राचीन भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक अध्ययन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2008 द्य 5. के. पी. एस. विश्वनाथन, नातेदारी, विवाह एवं परिवार, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2012 द्य 6. डा. निशांत सिंह, भारतीय महिलाएँ– एक सामाजिक अध्ययन, ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2009 द्य 7. के. एम. कापड़िया, भारत वर्ष में विवाह एवं परिवार, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1963 द्य 8. श्यामचरण दुबे, मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली 1993 द्य 9. रामा अहूजा, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, राउत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली पृ. सं.–09